एन.सी.ई.आर.टी. के नये पाठ्यक्रम का प्रारूप

भूमण्डलीकरण की ताल और देशी-विदेशी पूंजी की संगत पर "राष्ट्रीयता", "भारतीयता" और "नैतिकता" का पाठ सीखो!

अभिनव सिन्हा

सत्तारूढ़ होने के बाद से केन्द्र की भाजपा गठबन्धन सरकार ने विभिन्न स्तरों पर शिक्षा के क्षेत्र में जो "सुधारात्मक" काम निपटाएं हैं, उसके पीछे कौन सी चिन्ताएं हैं, इसपर अब किसी को सन्देह नहीं रहा। अब तक चले आ रहे शिक्षा के समूचे ढांचे पर मानव संसाधन विकास मंत्री माननीय मुरली मनोहर जोशी जी का असन्तोष इस हद तक है कि वे सब कुछ उलट-पुलट देने पर आमादा हैं। पाठ्यक्रमों को, प्रशासनिक ढांचे और शुल्क ढांचे को... सबकुछ को "नई जरूरतों" के मुताबिक नया करने के लिए जो 'मास्टर प्लान' उन्होंने बनाया है उसे वह अपने कारकुनों की मदद से कदम-ब-कदम मुस्तैदी के साथ लागू करते चले आ रहे हैं।

इसी दिशा में पिछले दिनों एक नया कदम उठाया गया है। बीते बाल दिवस (14 नवम्बर, 2000) को राष्ट्रीय शैक्षिक एवं अनुसंधान परिषद (एन.सी.ई.आर.टी.) ने 'स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम का प्रारूप' नाम से एक नया दस्तावेज जारी किया है। दस्तावेज के लेखकों ने काफी मेहनत कर भाषा और शब्दावली गढ़ी है, जिससे नये पाठ्यक्रम के पीछे छुपे इरादों को छिपाया जा सके। लेकिन इरादे छुपाये नहीं जा सके हैं। एक सरसरी नजर डालने पर ही वह जमीन नजर आ जाती है, जिसपर खड़े होकर पाठ्यक्रमों के पुराने पड़ जाने पर चिन्ताएं जतायी गयी हैं।

भूमण्डलीकरण के दौर में स्कूली शिक्षा के उद्देश्य पर राय जाहिर करते हुए दस्तावेज में एक जगह कहा गया है : **"एक ओर शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो एक भूमण्डलीय व्यवस्था को बढ़ाने में मददगार हो तो दूसरी ओर इसे राष्ट्रीय अस्मिता के लिए जरूरी राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रीय भावना एवं राष्ट्रीय एकता विकसित करते हुए भी दिखायी देना चाहिए।** दस्तावेज का यह छोटा सा अंश स्कूली शिक्षा के नये पाठ्यक्रम के प्रारूप की सारवस्तु है जो दस्तावेज में मौजूद ब्यौरों और तफसीलों का बुनियादी दिशानिर्देशक है।

किसी भी समाज में शिक्षा को बदलती जरूरतों के अनुसार ढालना चाहिए, भला किसी को इसपर क्या ऐतराज हो सकता है? यह तो सार्वभौम सत्य है। ठीक वैसे ही, जैसे यह कि सूरज पूरब दिशा से निकलता है। लेकिन सार्वभौमिक सत्य का बयान करने के अन्दाज में स्कूली शिक्षा के पाठ्यक्रम का नवीनीकरण करने के पीछे छुपे असली इरादों को यदि पकड़ना है तो हमें यह सवाल उठाना ही होगा कि वर्गों में बंटे समाज में शिक्षा प्रमुखत:

समाज के किन वर्गों की जरूरतों को पूरा करती है? क्या समाज की आम आबादी की जरूरतों को? क्या उत्पादन, राजकाज और समाज के समूचे ढांचे पर कब्जा जमाये वर्गों की जरूरतें और आम आबादी की जरूरतें एक हैं? इन सवालों के आइने में यह बिलकुल साफ हो जायेगा कि आज "भूमण्डलीय व्यवस्था को आगे बढ़ाने में मददगार" शिक्षा समाज के किन वर्गों की सेवा में समर्पित होने जा रही है।

पिछले एक दशक से देश में भूमण्डलीय व्यवस्था लगातार आगे बढ़ती जा रही है। इसके नतीजे अब आम अनुभव की बात हो चुके हैं। कम्प्यूटर और सूचना-तकनीक की लहर पर सवार विशिष्ट वर्ग निस्सीम आनन्दानुभूति की नयी-नयी तरकीबें ढूंढ़ता आम जनों की साधारण जरूरतों तक को रौंदता-कुचलता आगे ही आगे बढ़ता जा रहा है। ऐसे में, अगर माननीय मुरली मनोहर जोशी जी इस विशिष्ट वर्ग के चरित्र नायक और संस्कृति-प्रतीक बनकर शिक्षा के ढांचे को भी नया-नया बनाने पर तुले हुए हैं तो फिर इसमें हर्ज ही क्या है?

विशिष्ट जनों के लिए विशिष्ट शिक्षा और साधारण जनों के लिए साधारण शिक्षा—यह दो तरह की शिक्षा तो हमारे देश में पहले से ही चली आ रही है। हां, भूमण्डलीकरण का दौर शुरू होने के पहले तक इतना जरूरत था कि इस दोहरेपन को खत्म करने के लिए कम से कम जुबानी-जमा खर्च किया जाता था। इस नये पाठ्यक्रम की घोषणा के बाद नयी चीज यह हुई है कि इस मामले में 'कथनी-करनी' के दोहरेपन को खत्म कर दिया गया है। अब डंके की चोट पर दो तरह की शिक्षा दी जायेगी। एन.सी.ई.आर.टी. के नये प्रारूप में इसका पक्का इंतजाम किया गया है।

भूमण्डलीय व्यवस्था को आगे बढ़ाने में सूचना-तकनीक के महत्व पर दस्तावेज में बार-बार चर्चा की गयी है। विशेष जोर के साथ। बेहद स्वाभाविक है यह, क्योंकि शासकवर्ग की नयी जरूरतों के साथ इसका मेल है। पूंजीवादी उत्पादन अधिकाधिक श्रम सघन (labour intensive) के बजाय पूंजी सघन (capital intensive) होता जा रहा है। यानी कम से कम श्रमशक्ति लगाकर अधिकाधिक पूंजी कैसे बढ़ायी जाये? इसमें सूचना-तकनीक के नवीनतम आविष्कारों की भूमिका आसानी से समझी जा सकती है। स्कूली छात्रों को सूचना-तकनीक की नवीनतम जानकारियों की शिक्षा देना शासक वर्गों की इस जरूरत के लिहाज से बेहद जरूरी है, इसमें दो राय नहीं। इस जरूरत के महत्व और इसके लिए विशेष शिक्षा देने के महत्व पर सिर्फ गौर किया जाये और शासक वर्ग की

जरूरतों को पूरे समाज की जरूरतें बना दिया जाये तो फिर इस विशेष शिक्षा पर उंगली उठाना बेवजह की खुरपेंच ही कही जायेगी। लेकिन, बात महज इतनी नहीं हैं।

सूचना तकनीक की यह विशेष शिक्षा किन छात्रों को मिलेगी? दस्तावेज ने सुझाया है कि यह **'गॉड गिफ्टेड'** और **"प्राकृतिक रूप से"** तीक्ष्ण बुद्धि वाले छात्रों को दी जायेगी। इस श्रेणी के छात्रों की पहचान कैसे जायेगी? इसका भी उपाय सुझाया गया है। छात्रों का **'आई क्यू'** (Intelligence Quotient), **'ई क्यू'** (Emotional Quotient) और **'एस क्यू'** (Spiritual Quotient) मापा जायेगा।

छात्रों के मेधा मापन की यह विधि, कहने की जरूरत नहीं, शासक वर्गों की सेवा में अपनी मेधा समर्पित कर चुके शिक्षा-नौकरशाहों की भीषण सर्जनात्मकता से आविष्कृत हुई है। खासकर, बाद की दो विधियां। वैसे, अब तक पहले वाली विधि से ही दुनिया परिचित थी। अब दुनिया यह भी जान चुकी है 'आई क्यू' का आविष्कार किस तरह नस्लभेद समर्थक दिमागों ने श्वेतों को मानसिक रूप से ज्यादा विकसित तथा काले लोगों को तुलनात्मक रूप से अविकसित साबित करने के लिए गढ़ा था। पिछली सदी में हुई कई अन्य जांचों ने 'आई.क्यू' वाली विधि को अवैज्ञानिक साबित कर दिया है। लेकिन मेधा परीक्षण की यह खारिज की जा चुकी विधि यदि 'भूमण्डलीय व्यवस्था को आगे बढ़ाने में मददगार' शिक्षा के लिए उपयोगी न होती तो इसे देश में लागू करने की सिफारिश न की जाती। शिक्षा के बाजारीकरण के मौजूदा दौर और भारत के विशेष सन्दर्भ में 'इंटलिजेंस कोटियंट' का अर्थ होगा 'मनी कोटियंट'। आर्थिक रूप से सबल छात्र ही इस मेधा परीक्षण में बाजी मारेंगे क्योंकि इस परीक्षण में जो प्रश्न पूछे जायेंगे उनका जवाब सूचना-संचार तकनीक की सुविधाओं की छांह में पल रहे नौनिहाल ही दे सकेंगे। यह विभिन्न स्तरों पर आयोजित होने वाली प्रवेश परीक्षाओं के प्रश्नपत्रों के पैटर्न को देखकर आसानी से समझा जा सकता है। साफ है कि समाज के साधन-सम्पन्न वर्गों के लाडले ही "प्राकृतिक रूप से तीक्ष्ण" या "गॉड गिफ्टेड" साबित होंगे, जिन्हें चुनकर सूचना-तकनीक की नवीनतम "विशेष शिक्षा" दी जायेगी। जाहिर है, स्कूली शिक्षा योग्य आयु-वर्ग के बमुश्किल पन्द्रह फीसदी छात्र ही इस विशेष सुविधा के लाभार्थी होंगे।

रही बात बाकी पचासी प्रतिशत आम आबादी के बेटे-बेटियों की, तो प्रारूप के विद्वान लेखकों की 'सर्वसमावेशी' दृष्टि से वे भी ओझल नहीं हैं। इन छात्रों को **"रोजगार आधारित शिक्षा"** दी जायेगी। अगर सभी छात्र सूचना-तकनीक की विशेष शिक्षा हासिल कर विदेश सेवा में ही चले जायेंगे तो फिर देश के भीतर क्लर्क, चपरासी, चौकीदार, बढ़ईगिरी, लुहारगिरी, राजमिस्त्रीगिरी कौन बनेगा? सड़कों-शौचालयों की सफाई कौन करेगा? कारखानों में मशीनें कौन चलायेगा? फोरमैनी, ड्राईवरी कौन करेगा? आखिर ये सब **समाजोपयोगी उत्पादक** कार्य नहीं हैं क्या? रोजगार के इस लम्बे-चौड़े 'स्पेस' में भटकने के लिए प्रारूप लेखकों ने शत-प्रतिशत आरक्षण दे दिया है। यह पहले भी था, लेकिन आधिकारिक ज्यादा था, अब पूर्ण आधिकारिक हो जायेगा। अब सरकार पर तोहमत लगाने का यह नैतिक अधिकार नहीं बचेगा कि वह साधनहीन छात्रों की उपेक्षा कर रही है।

"भूमण्डलीय व्यवस्था को आगे बढ़ाने में मददगार" होने के लिए सिर्फ वैज्ञानिक एवं तकनीकी शिक्षा ही काफी नहीं है। छात्रों को मूल्यों से लदी-फदी शिक्षा भी देनी पड़ेगी. विद्वान पाठ्यक्रम निर्माता इस महत्व को न केवल समझते हैं, बल्कि भलीभांति समझते हैं। इसलिए, उन्होंने **"राष्ट्रीय अस्मिता के लिए जरूरी राष्ट्रीय चेतना, राष्ट्रीय भावना एवं राष्ट्रीय एकता"** की भावना छात्रों के अन्दर विकसित करने के लिए पुख्ता इंतजाम किया है। अब तक चली आ रही शिक्षा यह काम ठीक से नहीं करवा रही थी, ऐसा मानना है लेखकों का। लेकिन वह अब तक यह क्यों नहीं कर पा रही थी? नैतिक शिक्षा, इतिहास एवं सामाजिक विज्ञान के अन्य विषयों के अब तक चले आ रहे कौन से पाठ आपत्तिजनक या अवरोधक बने हुए हैं, इसकी ओर इशारा तक किये बिना सीधे सुझाव दिये गये हैं। शायद नकारात्मक दृष्टिकोण के बजाय सकारात्मक दृष्टिकोण वाले कहलाने का आग्रह ज्यादा हावी हो गया हो! बहरहाल, आइये कुछ सुझावों पर गौर करें।

मूल्यों के ह्रास के मौजूदा समय में सरकारी शिक्षाविदों ने छात्रों को नैतिकता का पाठ पढ़ाना अपना परम धर्म माना है। उनके ख्याल से धर्म ही सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है, जिससे सबसे अच्छी नैतिकता का पाठ पढ़ाया जा सकता है। अनेक धर्मों वाले देश की विशेष परिस्थितियों में किस धर्म की नैतिक शिक्षाएं ज्यादा मूल्यवान होंगी, इसका सीधे-सीधे मूल्यांकन करने से बचते हुए सिर्फ सपाटबयानी में ही यह चर्चा की गयी है, जिससे कोई सीधे-सीधे यह आरोप चस्पां न करे कि वे संघी एजेण्डा थोप रहे हैं। (देखें बॉक्स : *किन मूल्यों की घुट्टी पिलाना चाहते हैं एन.सी.ई.आर.टी. के निदेशक महोदय*)। लेकिन, तमाम चतुराइयों के बावजूद कई ऐसे सूत्र (सुराग?) छूट गये हैं, जिनके सिरे को पकड़कर असली मंशा और खुले एजेण्डे (छुपा हुआ एजेण्डा कहना संसदीय अखाड़ेबाजों और दिग्भ्रमित बुद्धिजीवियों की उक्ति है!) तक पहुंचना बेहद आसान है।

प्रारूप में एक जगह कहा गया है कि **"हम स्वदेशीय (भारत में पैदा हुई) सभ्यता को प्रोत्साहित करेंगे।"** सच ही है अपराधी कोई न कोई सुराग छोड़ ही जाता है। यदि उपर्युक्त वाक्यांश को हम भारतीय इतिहास, संस्कृति और सभ्यता की संघी समझ की रोशनी में पढ़ें तो मामला एकदम साफ हो जायेगा। "स्वदेशी" कौन है? "स्वदेशी सभ्यता" क्या है? "राष्ट्रीय अस्मिता", "राष्ट्रीय भावना" और "राष्ट्रीय एकता" जैसे पदों का क्या अर्थ है? यह सब अब छुपा हुआ नहीं रहा। संघ परिवार के सभी मुख और मुखौटे सिर्फ हिन्दू धर्मावलम्बियों को ही स्वदेशी मानते हैं। उनके लिए हिन्दू सभ्यता ही स्वदेशीय सभ्यता है और हिन्दू राष्ट्र की अवधारणा ही राष्ट्र की एकमात्र भारतीय अवधारणा है और धर्म तो राष्ट्र का केन्द्रीय संघटक अवयव है। बाकी सभी धर्मावलम्बी भारत के लिए विदेशी हैं, पराये हैं और उन्होंने भारत की सभ्यता, संस्कृति को भ्रष्ट किया है, भारतभूमि को पददलित किया है। संघ परिवार के शीर्ष सिद्धान्तपुरुष **गोलवलकर** के शब्दों में **"मुसलमान इस देश में रह सकते हैं, लेकिन पूर्णतया हिन्दू राष्ट्र की अधीनता में, किसी भी चीज पर दावा न करते हुए, सुविधाओं से वंचित होकर। विशेष व्यवहार तो दूर, वे एक नागरिक के अधिकारों से भी वंचित होंगे।"** (संदर्भ : वी, अवर नेशनहुड डिफाइन्ड)।

जोशी जी की विशेष अनुकंपा से एन. सी.ई.आर.टी. के निदेशक पद पर सुशोभित प्रो. राजपूत के निर्देशन में तैयार इस पाठ्यक्रम-प्रारूप में दर्ज की गयी उपर्युक्त शब्दावलियों-पदावलियों से क्या यह अर्थ निकालना ज्यादती होगी कि छात्रों को नैतिकता और राष्ट्रप्रेम का संघी पाठ सरकारी-गैरसरकारी सभी स्कूलों में पढ़ाये जाने की तैयारी की जा रही है।

अन्त में, विद्वान प्रारूप लेखकों के दो विलक्षण आविष्कारों—ई. क्यू और एस.क्यू पर कुछ शब्द। दस्तावेज में इसकी कोई स्पष्ट

(शेष पृष्ठ 10 पर)

(पृष्ठ 8 का शेष)

परिवेश की ये विसंगतिया नजर नहीं आयी होंगी, ऐसा नहीं है। बात दरअसल यह है कि नैतिकता और मूल्यों के बारे में चिन्तित ये सज्जन खुद भी समाज की इन्हीं विसंगतियों की उपज हैं। प्रो. राजपूत जैसे लोगों का चिन्तन उस चौहद्दी के बाहर जा ही नहीं सकता जहां से बाहर निकलकर ही इन विसंगतियों को सुलझाया जा सकता है। वह चौहद्दी है लूट एवं शोषण पर टिकी आज के समाज की आर्थिक बुनियाद व इस पर खड़ी हुई समूची राजनीतिक-सामाजिक-सांस्कृतिक इमारत, जिसे ध्वस्त किये बिना शिक्षा के ढांचे में किसी मूलभूत बदलाव की बात करना या तो काइयांपन हो सकता है या निरी मूर्खता। प्रो. राजपूत किस कोटि के हैं यह आकलन करना महत्वहीन है।

हां, प्रो. राजपूत एक दुविधा के शिकार जरूर हैं, जिसे व्यक्त करते समय वे नये पाठ्यक्रम की व्यावहारिकता पर खुद ही सवाल कर बैठते हैं। वह कहते हैं कि नये पाठ्यक्रम के जरिये सिखाये जाने वाले मूल्य प्रभावी होंगे या नहीं यह बच्चे के बाह्य परिवेश पर निर्भर करता है। लेकिन, इस बात से सिखाये जाने वाले मूल्यों से कोई फर्क नहीं पड़ने वाला है इसलिए किसी स्तर पर इनका पाठ नहीं पढ़ाया जाये, इसे जायज तो नहीं ठहराया जा सकता। इस पर तो सिर्फ यही कहा जा सकता है कि प्रो. राजपूत आप पूरे मनोयोग के साथ फल की चिन्ता किये बिना कर्म करते जाइये, दुविधा में पड़ेंगे तो न माया मिलेगी न राम मिलेंगे, न मुरलीधर। ●

(पृष्ठ 9 का शेष)

व्याख्या या कोई विधि वर्णित नहीं है। लेकिन, "भूमण्डलीय व्यवस्था को आगे बढ़ाने में मददगार" शिक्षा के उद्देश्य की दृष्टि से इसकी संक्षिप्त व्याख्या ऐसे की जा सकती है :

पहला, विशिष्ट वर्ग के उन छात्रों का ई. क्यू और एस.क्यू उच्चस्तरीय होगा जो कम्प्यूटर-इंटरनेट की उच्च तकनीकी शिक्षा पूर्ण एकाग्रचित्त होकर अर्जित करेंगे और हर प्रकार के सामाजिक अन्याय, असमानता और शोषण से मुंह फेरकर पूर्णतया भावनाहीन और संवेदनहीन बनने को तत्पर होंगे। दूसरा, सामान्य वर्ग के उन छात्रों का एस. क्यू और ई. क्यू उच्च स्तरीय होगा जो राजभक्त और स्वामिभक्त होंगे, प्रभु वर्ग की सेवा अपनी नियति या पुराने पापों का फल मानकर करते रहेंगे और देशी-विदेशी लुटेरों की भूमंडलीय व्यवस्था की जड़ खोदने की दिशा में दिमाग को भटकने से रोकेंगे। ●

शिक्षा को उम्दा बाजारू माल बनाने के लिए बिड़ला-अम्बानी कम्पनी का नया फार्मूला

आदेश सिंह

बिड़ला और अम्बानी समूह को आप किस रूप में जानते हैं? विभिन्न किस्म के औद्योगिक उत्पादों के जरिये भारत के घरेलू बाजार को अपने कब्जे में रखने वाली एकाधिकारी पूंजी के स्वामियों के रूप में ही अगर अब तक आप जानते हैं तो आपकी जानकारी बासी पड़ चुकी है। कृपया ताजा जानकारी से अपना सामान्य ज्ञान बढ़ा लें। बिड़ला-अम्बानी की ज्वाइंट स्टॉक कम्पनी ने शिक्षा क्षेत्र की गुणवत्ता के लिए एक नये उत्पाद का फार्मूला पास करने के लिए प्रधानमंत्री के पास भेजा है। इस बात की सम्भावना शून्य के बराबर है कि फार्मूला रिजेक्ट कर दिया जाये।

शायद आपकी जानकारी में यह बात न हो कि शिक्षा विशेषज्ञ के रूप में बिड़ला-अम्बानी कम्पनी को मान्यता स्वयं प्रधानमंत्री ने ही दी थी। प्रधानमंत्री के विशेष निर्देश पर विगत 28 अगस्त 1998 को एक अधिसूचना जारी कर व्यापार एवं उद्योग परिषद का गठन किया गया था। उस समय इसके सदस्य थे—रतन टाटा, कुमारमंगलम बिड़ला, मुकेश अम्बानी, आर.पी. गोयनका, पी.के. मित्तल, सुरेश कृष्ण (टी.वी. एस.ग्रुप), एन.आर.नारायणमूर्ति (इनफोसिस वाले), नुस्ली वाडिया, ए.सी. मुथैया और डॉ. परविन्दर सिंह। परिषद के अध्यक्ष स्वयं अटल बिहारी वाजपेयी थे। 13 नवम्बर 1999 को एक अन्य अधिसूचना के जरिये इसका पुनर्गठन किया गया, जिसके जरिये सदस्यों में कुछ बदलाव कर संजीव गोयनका, राहुल बजाज, एन. श्रीनिवासन, प्रधानमंत्री के मुख्य सचिव बृजेश मिश्रा को शामिल किया गया। इस परिषद के तहत छह ग्रुप बनाये गये जिन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, सेवा क्षेत्र, पूंजी बाजार, निजीकरण, अच्छा शासन आदि पर अपनी रिपोर्ट तैयार करने और सिफारिशें प्रस्तुत करने के लिए कहा गया। इसके लिए उन्हें सम्बन्धित मंत्रालयों और विभागों तथा प्रधानमंत्री कार्यालय से अधिकतम सम्भव सहयोग और सुविधाएं प्रदान करने का आश्वासन भी दिया गया। 11 दिसम्बर 1999 को फिर इन छह ग्रुपों को बढ़ाकर आठ कर दिया गया और उनसे सलाह मांगी गयी। मुकेश अम्बानी और कुमारमंगलम बिड़ला शिक्षा के लिए गठित विशेष समूह के विशेषज्ञ बनाये गये।

इन धनकुबेर विशेषज्ञों ने भूमण्डलीकरण चश्मे और अन्तरराष्ट्रीय मुद्राकोष-विश्वबैंक के 'स्टेथोस्कोप' से देश की उच्च शिक्षा की बीमारी का अध्ययन कर इलाज के लिए नुस्खे तैयार किये और "दवा का सैम्पल" जनवरी महीने में प्रधानमंत्री कार्यालय भेज दिया है। सम्भावना है कि प्रधानमंत्री कार्यालय से अनापत्ति प्रमाणपत्र मिलने में कोई अड़चन नहीं आयेगी और दवा को व्यापक स्तर पर उपभोग के लिए बाजार में जल्दी ही उतारा जायेगा।

हालांकि जो सिफारिशें भेजी गयी हैं, वे नयी नहीं हैं क्योंकि देश के उच्च शिक्षा संस्थानों में सीमित पैमाने पर इनका अमल पहले से ही जारी है। कुछ प्रमुख सिफारिशें इस प्रकार हैं :

- एक निजी विश्वविद्यालय-विधेयक तैयार किया जाये जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में निजी विश्वविद्यालयों को प्रोत्साहित करे।
- विश्वविद्यालयों को दी जाने वाली सरकारी सहायता धीरे-धीरे खत्म कर दी जाये।
- शिक्षा क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के उपाय किये जायें।
- कानून बनाकर विश्वविद्यालयों-कालेजों में राजनीतिक गतिविधियों पर रोक लगा दी जाये।
- प्राइवेट रेटिंग कम्पनियों से विश्वविद्यालयों के काम-काज की रेटिंग करवाई जाये।

ये सभी सिफारिशें भूमण्डलीकरण के मौजूदा दौर में देशी-विदेशी पूंजी की नयी जरूरतों को पूरा करने की दिशा में निर्णायक कदम उठाने के आदेशपत्र जैसे हैं जिन्हें अमली जामा पहनाने के लिए अब सिर्फ सरकारी मुहर की जरूरत बाकी है। शिक्षा क्षेत्र को देशी-विदेशी पूंजी के निवेश के लिए तैयार करने के लिए सबसे जरूरी है कि शिक्षा के बारे में "परम्परागत" सोच को बदला जाये। शिक्षा को अन्य उद्योगों जैसा दर्जा दिया जाये जिसमें सिर्फ लाभ-हानि के गणित पर पूंजीप्रवाह हो। शिक्षा के बारे में सोच बदलने का काम पिछले एक दशक से जारी है। भाड़े के शिक्षाविद, बाजारप्रेमी प्रोफेसर और मीडिया के कलमघिस्सू पश्चिमी देशों के उदाहरण दे-देकर इस काम में अपनी सारी ऊर्जा लगाये हुए हैं। एक मानसिकता तैयार की जा रही है कि शिक्षा राज्य का उत्तरदायित्व और समाज का विषय